

उद्याने क्रीडितुं गत्वा कदाचिल्लकुचो मुदा। पूर्वपुण्यप्रयोगेन दृष्ट्वा तत्र मुनीश्वरम् ॥९॥
 धर्ममाकर्ण्य जैनेन्द्रं शीघ्रं वैराग्यमाश्रितः। पुंगलेन तदा ज्ञात्वा गत्वा तत्र प्रकोपतः ॥१०॥
 वैराल्लोहशलाकाभिः सन्धिस्थानेषु कीलितम्। तच्छरीरं तदा सोपि जैनधर्मानुरागभाक् ॥११॥
 जित्वोपसर्गकं स्वामी परलोकं गतो ध्रुवम्। विचित्रं भव्यजीवानां चारित्रं भुवनोत्तमम् ॥१२॥
 स जयतु मुनिनाथो भूरिकष्टं सुजित्वा सपदि लकुचनामा प्राप्तवाञ्छर्मसारम्।
 गुणगणमणिरुद्रो बोधसिन्धुः प्रसान्द्रो जिनपतिहिमरश्मिः प्रोल्लसद्रश्मियोगात् ॥१३॥
 इति कथाकोशे धर्मानुरागरक्ताख्यानं समाप्तम्।

१०५. दर्शनाऽपतिताख्यानम्

संप्रणम्य जिनाधीशं सर्वदोषविवर्जितम्। दर्शनाच्च्यवनाख्यानं प्रवक्ष्ये जगद्दर्शितम् ॥१॥
 पाटलीपुत्रसन्नाम्नि पत्तने सुचिरन्तने। जिनदत्तोभवच्छ्रेष्ठी परमेष्ठिपदे रतः ॥२॥

समय उसे प्राप्त कर अपनी नीच मनोवृत्ति की तृप्ति की। पुंगल उसकी इस नीचता से सिर से पाँव तक जल उठा। क्रोध की आग उसके रोम-रोम में फैल गई वह राजकुमार के दबदबे से कुछ करने-धरने को लाचार था। पर उस दिन की बाट वह बड़ी आशा से जोह रहा था, जिस दिन कि वह लकुच से उसके कर्मों का भरपूर बदला चुका कर अपनी छाती ठण्डी करे ॥८-९॥

एक दिन लकुच वन क्रीड़ा के लिए गया हुआ था। भाग्य से वहाँ उसे मुनिराज के दर्शन हो गए। उसने उनसे धर्म का उपदेश सुना। उपदेश का प्रभाव उस पर खूब पड़ा। इसलिए वह वहीं उनसे दीक्षा ले मुनि हो गया। उधर पुंगल ऐसे मौके की आशा लगाये बैठा ही था, सो जैसे ही उसे लकुच का मुनि होना जान पड़ा वह लोहे के बड़े-बड़े तीखे कीलों को लेकर लकुच मुनि के ध्यान करने की जगह पर आया। इस समय लकुच मुनि ध्यान में थे। पुंगल तब उन कीलों को मुनि के शरीर में ठोक कर चलता बना। लकुच मुनि ने इस दुःसह उपसर्ग को बड़ी शान्ति, स्थिरता और धर्मानुराग से सह कर स्वर्ग लोक प्राप्त किया। सच है, महात्माओं का चरित्र विचित्र ही हुआ करता है। वह अपने जीवन की गति को मिनट भर में कुछ को कुछ बदल डालते हैं ॥१०-१२॥

वे लकुच मुनि जय लाभ करें, कर्मों को जीतें, जिन्होंने असह्य कष्ट सहकर जिनेन्द्र भगवान् रूपी चन्द्रमा की उपदेशरूपी अमृतमयी किरणों से स्वर्ग का उत्तम सुख प्राप्त किया, गुणरूपी रत्नों के जो पर्वत हुए और ज्ञान के गहरे समुद्र कहलाये ॥१३॥

१०५. सम्यग्दर्शन पर दृढ़ रहने वाले की कथा

सब प्रकार के दोषों रहित जिन भगवान् को नमस्कार कर सम्यग्दर्शन को खूब दृढ़ता के साथ पालन करने वाले जिनदास सेठ की पवित्र कथा लिखी जाती है ॥१॥

प्राचीन काल से प्रसिद्ध पाटलिपुत्र (पटना) में जिनदास नाम का एक प्रसिद्ध और जिनभक्त

तद्भार्या जिनदासी च तयोः पुत्रो गुणोज्ज्वलः। जिनदासो विशुद्धात्मा जिनभक्तिसुतत्परः ॥३॥
 एकदा जिनदासोऽसौ सुवर्णद्वीपतो महान्। सद्भनं समुपाज्योच्चैरागच्छति यदाम्बुधौ ॥४॥
 शतयोजनविस्तारयानपात्रस्थितेन च। दुष्टचित्तेन कालाख्यदेवेनेत्थं प्रजल्पितम् ॥५॥
 जिनदास त्वया शीघ्रं कथ्यते चेदिदं वचः। नास्ति देवो जिनश्चापि नैव जैनं मतं भुवि ॥६॥
 त्वं मया मुच्यते शीघ्रं मार्यते नान्यथा ध्रुवम्। तत्समाकर्ण्य तैः सर्वैर्जिनदासादिभिर्दुतम् ॥७॥
 मस्तकन्यस्तलसद्भस्तैर्वर्द्धमानजिनेश्वरम्। नमस्कृत्य महाभक्त्या संप्रोक्तं रे दुराशय ॥८॥
 अस्ति श्रीमज्जिनाधीशः केवलज्ञानभास्करः। सर्वोत्तमं मतं तस्य वर्द्धते भुवनार्चितम् ॥९॥
 तथा श्रीजिनदासोऽसौ सर्वेषामग्रतस्तदा। ब्रह्मदत्तेशिनः पञ्चनमस्कारकथां जगौ ॥१०॥
 तदोत्तरकुरुस्थेन निजासनसुकम्पनात्। अनावृत्ताख्ययक्षेण समागत्य प्रवेगतः ॥११॥
 कोपाच्चक्रेण पापात्मा ताडितो मुकुटे कुधीः। कालदेवः कुदेवोसौ पातितो वडवानले ॥१२॥
 लक्ष्मीदेव्या तदागत्य सर्वे ते जैनधर्मिणः। अर्घं दत्त्वा महाभक्त्या पूजिताः परमादरात् ॥१३॥

सेठ हो चुका है। जिनदास सेठ की स्त्री का नाम जिनदासी था। जिनदास, जिसकी कि यह कथा है, इसी का पुत्र था। अपनी माता के अनुसार जिनदास भी ईश्वर प्रेमी, पवित्र हृदयी और अनेक गुणों का धारक था ॥२-३॥

एक बार जिनदास सुवर्ण द्वीप से धन कमाकर अपने नगर की ओर आ रहा था। किसी काल नाम के देव की जिनदास के साथ कोई पूर्व जन्म की शत्रुता होगी इसलिए वह देव इसे मारना चाहता होगा। यही कारण था कि उसने कोई सौ योजन चौड़े जहाज पर बैठे-बैठे ही जिनदास से कहा—जिनदास, यदि तू यह कह दे कि जिनेन्द्र भगवान् कोई चीज नहीं, जैनधर्म कोई चीज नहीं, तो तुझे मैं जीता छोड़ सकता हूँ, नहीं तो मार डालूँगा। उस देव का वह डराना सुन जिनदास वगैरह ने हाथ जोड़कर श्रीमहावीर भगवान् को बड़ी भक्ति से नमस्कार किया और निडर होकर वे उससे बोले—पापी, यह हम कभी नहीं कह सकते कि जिनभगवान् और उनका धर्म कोई चीज नहीं; बल्कि हम यह दृढ़ता के साथ कहते हैं कि केवलज्ञान द्वारा सूर्य से अधिक तेजस्वी जिनेन्द्र भगवान् और संसार द्वारा पूजा जाने वाला उनका मत सबसे श्रेष्ठ है। उनकी समानता करने वाला कोई देव और कोई धर्म संसार में है ही नहीं। इतना कह कर ही जिनदास ने सबके सामने ब्रह्मदत्त चक्रवर्ती की कथा, जो कि पहले कहानी संख्या १८ पर लिखी जा चुकी है, कह सुनाई उस कथा को सुनकर सबका विश्वास और भी दृढ़ हो गया। इन धर्मात्माओं पर इस विपत्ति के आने से उत्तरकुरु में रहने वाले अनाव्रत नाम के यक्ष का आसन कंपा। उसने उसी समय आकर क्रोध से कालदेव के सिर पर चक्र की बड़ी जोर की मार जमाई और उसे उठाकर बड़वानल में डाल दिया ॥४-१२॥

जहाज के लोगों की इस अचल भक्ति से लक्ष्मी देवी बड़ी प्रसन्न हुई उसने आकर इन धर्मात्माओं का बड़ा आदर-सत्कार किया और इनके लिए भक्ति से अर्घ चढ़ाया। सच है, जो भव्यजन

ये भव्याः सारसम्यक्त्वं पालयन्ति विचक्षणाः। तेषां पादार्चनं भक्त्या के न कुर्वन्ति भूतले ॥१४॥
 ततस्ते जिनदासाद्या जिनभक्तिपरायणाः। समागत्य निजं गेहं संस्थिताः पुण्ययोगतः ॥१५॥
 जिनदासेन पृष्टश्च सावधिज्ञानलोचनः। मुनिः प्राह विशुद्धात्मा सर्वं तद्वैरकारणम् ॥१६॥
 त्रिभुवनैकहितं शिवकारणं शुचितरं प्रभजन्तु सुदर्शनम्।
 परमसौख्यकृते सुबुधोत्तमः किमिह चान्यमहाश्रमकारणैः ॥१७॥
 इति कथाकोशे दर्शनाऽपतिताख्यानं समाप्तम्।

१०६. अत्यक्तसम्यक्त्वाख्यानम्

नमस्कृत्य जिनं देवं देवदेवेन्द्रवन्दितम्। सम्यक्त्वामुक्तकाख्यानं द्वितीयं रचयाम्यहम् ॥१॥
 लाटदेशे सुविख्याते गलगोद्रहपत्तने। श्रेष्ठी श्रीजिनदत्तोभूज्जिनदत्तास्य कामिनी ॥२॥
 तयोर्जिनमतिः पुत्री रूपसौभाग्यशालिनी। संजाता पूर्वपुण्येन भवेद्रूपादिसम्पदा ॥३॥
 द्वितीयस्तु तथा श्रेष्ठी नागदत्तो विधर्मकः। नागदत्ताभवत्कान्ता रुद्रदत्तः सुतस्तयोः ॥४॥

सम्यग्दर्शन का पालन करते हैं, संसार में उनका आदर, मान कौन नहीं करता। इसके बाद जिनदास वगैरह सब लोग कुशलता से अपने घर आ गए। भक्ति से उत्पन्न हुए पुण्य ने इनकी सहायता की। एक दिन मौका पाकर जिनदास ने अवधिज्ञानी मुनि से कालदेव ने ऐसा क्यों किया इस बाबत का खुलासा पूछा। मुनिराज ने इस बैर का सब कारण जिनदास से कहा। जिनदास को सुनकर सन्तोष हुआ ॥१३-१६॥

जो बुद्धिमान् हैं, उन्हें उचित है या उनका कर्तव्य है कि वे परम सुख के लिए संसार का हित करने वाले और मोक्ष के कारण पवित्र सम्यग्दर्शन को ग्रहण करें। इसे छोड़कर उन्हें और बातों के लिए कष्ट उठाना उचित नहीं, कारण वे मोक्ष के कारण नहीं है ॥१७॥

१०६. सम्यक्त्व को न छोड़ने वाले की कथा

जिन्हें स्वर्ग के देव नमस्कार करते हैं, उन जिनेन्द्र भगवान् को नमस्कार कर सम्यक्त्व को न छोड़ने वाली जिनमती की कथा लिखी जाती है ॥१॥

लाटदेश के सुप्रसिद्ध गलगोद्रह नाम के शहर में जिनदत्त नाम का एक सेठ हो चुका है। उसकी स्त्री का नाम जिनदत्ता था। उसके जिनमती नाम की एक लड़की थी। जिनमती बहुत सुन्दरी थी। उसकी भुवनमोहिनी सुन्दरता देखकर स्वर्ग की अप्सराएँ भी लजा जाती थी। पुण्य से सुन्दरता प्राप्त होती है ॥२-३॥

यहीं पर एक दूसरा सेठ रहता था। उसका नाम नागदत्त था। नागदत्त की स्त्री नागदत्ता के रुद्रदत्त नाम का एक लड़का था। नागदत्त ने बहुतेरा चाहा कि जिनदत्त जिनमती का ब्याह उसके पुत्र रुद्रदत्त से कर दे। पर उसको विधर्म होने से जिनदत्त ने उसे अपनी पुत्री न ब्याही। जिनदत्त का यह